कण स्वर्ण की खान के अंश हैं, वैसे ही जीव की स्वरूप-स्थिति चिद्गुणों में श्रीकृष्ण के तुल्य है। दोनों के स्वरूप का भेद शाश्वत् है ही, नहीं तो, भक्तियोग का प्रश्न नहीं बनता। भक्तियोग में भगवान्, भक्त और दोनों में होने वाली प्रेम-विनिमय की क्रिया का होना आवश्यक है। अस्तु, भगवान और जीव के अपने-अपने स्वरूप का होना अनिवार्य सिद्ध होता है; इसके बिना भक्तियोग नहीं बन सकता। साथ ही, यह भी आवश्यक है कि सेवक जीव श्रीभगवान् के समान गुणातीत हो, क्योंकि इसके बिना वह परमेश्वर की सेवा नहीं कर सकता। राजा का निजी सहायक बनने के लिए पर्याप्त योग्यता होनी चाहिए। इसी प्रकार भगवत्सेवा करने के लिए आवश्यक है कि सब प्राकृत दोषों से मुक्त, अर्थात् ब्रह्मभूत हो जाय। वैदिक शास्त्रों में कहा है—**ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति।** परब्रह्म की प्राप्ति ब्रह्मभूत हो जाने पर ही हो सकती है। इसका अर्थ चिद्गुणों में ब्रह्म के समान हो जाना है। परन्तु ब्रह्मभूत हो जाने पर भी जीव के शाश्वत् स्वरूप का नाश नहीं होता।

**ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।**
**शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च।।२७।।**

**ब्रह्मणः**=निर्विशेष ब्रह्मज्योति का; **हि**=निःसन्देह; **प्रतिष्ठा**=आश्रय हूँ; **अहम्**=मैं; **अमृतस्य**=अमृत; **अव्ययस्य**=अविनाशी; **च**=तथा; **शाश्वतस्य**=सनातन; **च**=तथा; **धर्मस्य**=स्वरूप का; **सुखस्य**=सुख का; **ऐकान्तिकस्य**=परम; **च**=भी।

## अनुवाद

परम सुखस्वरूप, अमृत, अविनाशी और सनातन निर्विशेष ब्रह्म का मैं ही आश्रय (आधार) हूँ।।२७।।

## तात्पर्य

ब्रह्म स्वरूप से अमृत, अव्यय, नित्य और सुखमय है। यह ब्रह्म-तत्त्व परम सत्य की अनुभूति का प्रथम चरण है, परमात्मा तत्त्वज्ञान की द्वितीय श्रेणी है तथा श्रीभगवान् परम सत्य के अन्त हैं। इस प्रकार दोनों, निर्विशेष ब्रह्म तथा परमात्मा आदिपुरुष श्रीभगवान् के अन्तर्गत हैं। सातवें अध्याय में कहा है कि भौतिक प्रकृति श्रीभगवान् की अपरा (हेय) शक्ति का प्रकाश है। श्रीभगवान् इसी अपरा प्रकृति में जीवों का, जो परा प्रकृति के अंश हैं, गर्भाधान करते हैं। परा प्रकृति के इस संस्पर्श से जड़ अपरा प्रकृति क्रियान्वित हो उठती है। जब इस अपरा प्रकृति में बँधा जीव तत्त्वज्ञान का अनुशीलन करता है, तब उसका उत्थान होता है, जिससे वह शनैः-शनैः ब्रह्मभूत हो जाता है। परम सत्य के इस ब्रह्मस्तर की प्राप्ति स्वरूप-साक्षात्कार का प्रथम चरण ही है। इस अवस्था को प्राप्त ब्रह्मभूत पुरुष संसार से अतीत तो हो जाता है, किन्तु उसे ब्रह्मतत्त्व की वास्तव में पूर्ण अनुभूति नहीं हो पाती। यदि वह चाहे तो ब्रह्मभूत अवस्था में क्रमशः परमात्मा और भगवान् की अनुभूति तक उठ सकता है। वैदिक शास्त्रों मे इस प्रकार के बहुत से उदाहरण हैं। सनकादि चारों कुमार पूर्व में परम सत्य की निर्विशेष ब्रह्म धारणा में निष्ठ थे। बाद में, वे शनैः-शनैः भक्तियोग